1937 On Being Human

Manushya Ka Jeevan and *Manushya ka rahasya* (two unpublished essays, 1937)

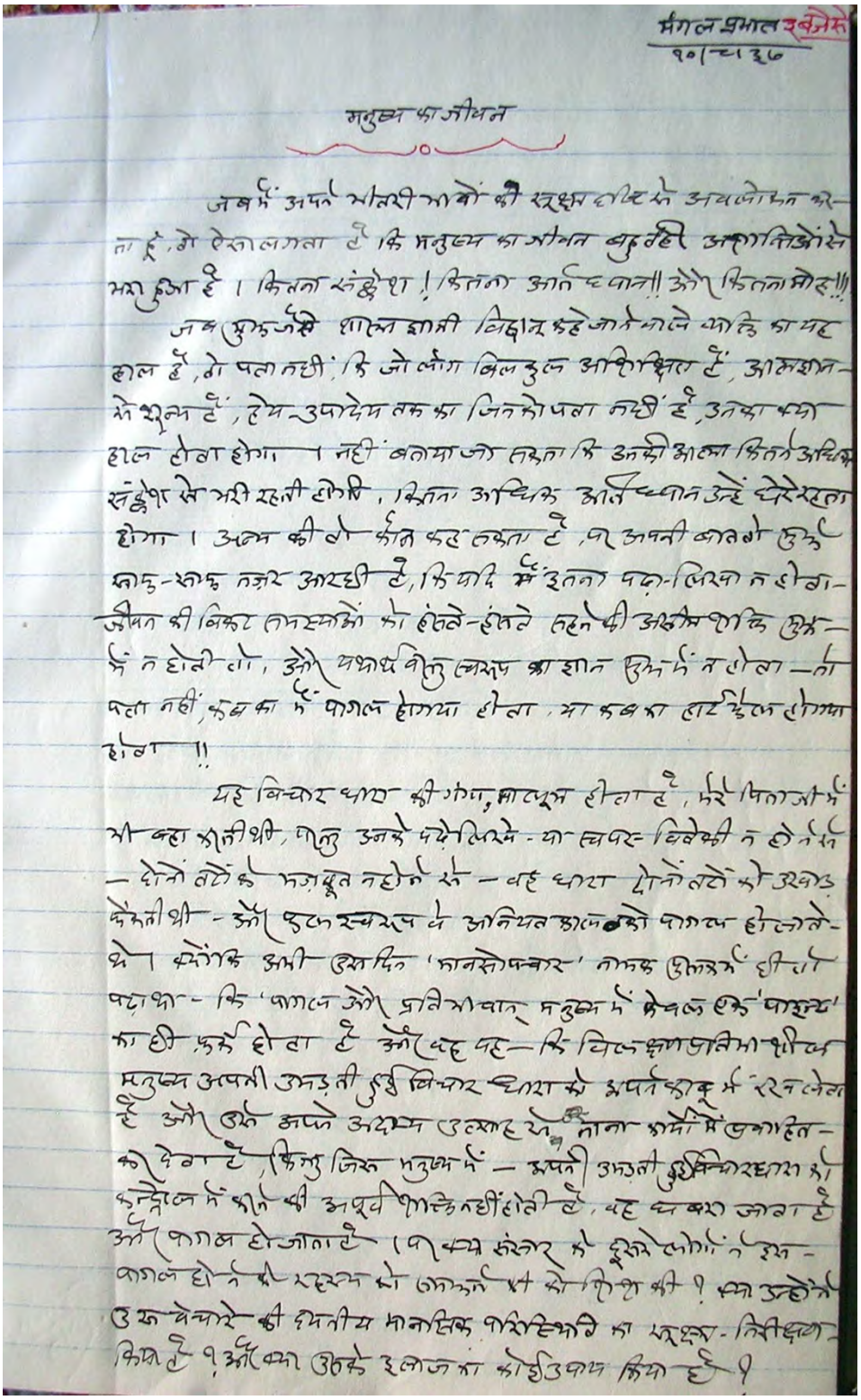

मंगल प्रभात रिजेक्ट
१०/५/३७

मनुष्य का जीवन

जब मैं अपने भीतरी भावों को सूक्ष्म दृष्टि से अवलोकन करता हूँ, तो ऐसा लगता है कि मनुष्य का जीवन बहुत ही अशान्तिओं से भरा हुआ है। कितना संक्लेश! कितना आर्त्तध्यान!! और कितना मोह!!!

जब मुझ जैसे शास्त्र ज्ञानी विद्वान् कहे जाने वाले व्यक्ति का यह हाल है, तो पता नहीं कि जो लोग बिलकुल अशिक्षित हैं, आत्मज्ञान से शून्य हैं, हेय-उपादेय तक का जिनको पता नहीं है, उनका क्या हाल होता होगा। नहीं बताया जा सकता कि उनकी आत्मा कितने अधिक संक्लेश से भरी रहती होगी, कितना अधिक आर्त्तध्यान उन्हें घेरे रहता होगा। अन्य की तो कौन कह सकता है, पर अपनी बात तो मुझे साफ़-साफ़ नज़र आ रही है, कि यदि मैं इतना पढ़ा-लिखा न होता— जीवन की विकट समस्याओं को हंसते-हंसते सहने की असीम शक्ति मुझमें न होती तो, और यथार्थ वस्तु स्वरूप का ज्ञान मुझमें न होता—तो पता नहीं, कब का मैं पागल हो गया होता, या कब का हार्टफेल हो गया होता!!

यह विचार धारा की गंगा, मालूम होता है, मेरे पिताजी में भी बहा करती थी, परन्तु उनके पढ़े-लिखे - या स्वपर-विवेकी न होने से - दोनों तटों के मज़बूत न होने से - वह धारा दोनों तटों को उखाड़ फेंकती थी - और फलस्वरूप वे अनियत काल को पागल हो जाते थे। क्योंकि अभी उस दिन 'मानसोपचार' नामक पुस्तक में ही तो पढ़ा था - कि 'पागल और प्रतिभावान् मनुष्य में केवल एक 'प्वाइन्ट' का ही फ़र्क होता है और वह यह - कि विलक्षण प्रतिभाशाली मनुष्य अपनी उमड़ती हुई विचार धारा को अपने काबू में रख लेता है और उसे अपने अदम्य उत्साह से नाना कार्यों में प्रवाहित कर देता है, किन्तु जिस मनुष्य में - अपनी उमड़ती हुई विचारधारा को नियन्त्रण में करने की अपूर्व शक्ति नहीं होती है, वह घबरा जाता है और पागल हो जाता है। पर क्या संसार के दूसरे लोगों ने इस पागल होने के रहस्य को जानने की कोशिश की? क्या उन्होंने उस बेचारे की दयनीय मानसिक परिस्थिति का सूक्ष्म-निरीक्षण किया है? और क्या उसके इलाज का कोई उपाय किया है?

ऐसे प्रबल विचारधारा सम्पन्न लोगों को यदि अपनी भावना-व्यक्त करने का सुन्दर सुयोग या सहयोग मिल जाय - तो कहा नहीं जा सकता, कि उनसे संसार को कौन-कौन सी नवीन-नवीन बातें सीखने को मिलें- ~~सकती~~ हैं, और वे संसार के सामने कौन-कौन से अपूर्व विजय खोज कर रख सकते हैं। पर संसार के तो उनकी - पागलों की - हंसी उड़ाने की ही रचना करती है और उसे उसमें ही आनन्द का अनुभव होने लगता है, पर वास्तव में विवेकी - विचारशील - या शालीन भावुक - सम्वेदनशील जीवों के लिए तो ये हंसी-मजाक उड़ाने वाले लोग ही पागल से प्रतीत होते हैं और वह उनके दुःखविमोचन के लिए सम्मत ही मन उपाय खोजा करता है और भावना किया करता है, कि भगवन् वह दिन कब नसीब होगा, जब कि ये संसार के पागल प्राणी - मूर्ख लोग और अचेतन जन - अज्ञान से छूटें - दुखों से छूटें और अपने यथार्थ स्वरूप को सुखद का लाभ करें।

हमारा सिद्धान्त हमें बताता है कि ~~हमारे~~ हमारे ही दुःखोत्पादक कर्म हमें ऐसी-ऐसी अवस्थाओं में डाल जाते हैं - ठीक है, इससे कौन इन्कार कर सकता है - पर खूब छानबीन करने पर भी पता नहीं चलता कि कौन से वे दुष्कर्म हैं, - कौन सी वे गलतियां हैं, जिनके फल स्वरूप हमें आज इतनी झंझटें उठाना पड़ती हैं। मैं तो अपने जीवन के पिछले दिनों की ओर जब देखता हूं और अपनी गहराई से विचार करता हूं - तो ऐसा लगता है कि इस जीवन में तो मैंने कोई ऐसी गलती नहीं की और न कोई ऐसा दुष्कर्म ही किया है, कि जिससे आज ऐसी विकट स्थिति में मुझे आना पड़े। हताश हो कर पर-भव या पूर्व-जन्म की ओर दौड़ते हैं और मानना पड़ता है कि वहां पर हमने कोई दुष्कर्म संचित किए होंगे - जिनका कि यह फल आज हमें नसीब हो रहा है। पर मेरी विचारधारा तो यहां तक आने पर भी संतोष या शान्ति की सांस नहीं लेने देती है और कहती है कि उस कारण को भी तो खोजो - जो आज तुम्हें संक्लिष्ट एवं संकटमय-जीवन बिताने को लाचार कर रहा है। मुझे भी मजबूर हो कर अपने कल्पित-पूर्वभव को सामने रखना पड़ता है और उसके सारा-जीवन पर गन्दे बदनामी के छींटे डालना पड़ती है, पर इससे अधिक कुछ समझ में नहीं आता कि आज इस शरीर से हम जो भी—

दुष्कर्म कर सकते हैं, जो भी काम कर सकते हैं, वही या वैसे ही काम हम पूर्वजन्म में कर सकते हैं या किए होंगे - जिनके फल आज भोग रहे हैं। क्योंकि आखिर दैव या कर्म, हमारे भले-बुरे पुरुषार्थ को छोड़कर अन्य कोई पृथक् वस्तु नहीं है। 'पूर्वजन्मकृतं कर्म, तद्दैवमिह कोच्यते'।

इस फलितार्थ को ध्यान में रखकर ही मुझे अपनी जीवनारंभ से लेकर आजतक की परिस्थितिओं पर छान-बीन करके देखना है कि मैंने आजतक वे कौन से दुष्कर्म किए हैं, जिनका फल इतने जबर्दस्त रूप में भोगना पड़ रहा है। मैं अपनी बाल्यावस्था से लेकर आज तक की जीवन घटनाओं पर दृष्टि डालूंगा और देखूंगा कि कौन ऐसी गलतियां मुझसे भी हुई हैं?

मंगलप्रभात १३।३।३८
४।३० पर उज्जैन

मनुष्यत्व का रहस्य

आज तक पढ़ी हुई पुस्तकों से पता चला है कि लोगों ने मनुष्यत्व का अर्थ सदा ही एकांगी लिया है पर यह मनुष्यत्व कितने रहस्यों से परिपूर्ण है, इसके अनुसंधान के लिए शायद आजतक किसीने प्रयास ही नहीं किया है - ऐसा प्रतीत होता है, अन्यथा ऐसी कौनसी वस्तु है जो प्रयास से न मिल जाती हो। अस्तु, आज मैं इसके रहस्योद्घाटन का प्रयत्न करता हूँ।

यह विषय तो इतना बड़ा व लम्बा है कि शायद मैं जीवनभर भी लिखूं, तो नहीं लिख सकता। और लिखा भी कैसे जासकता है, जबकि मैं स्वयं ही आज द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव आदि सभी दृष्टियों से अपूर्ण मनुष्य हूं। इसलिए इस दिशा में जो कुछ भी प्रयास करूंगा - वह मनुष्यत्व के रहस्योद्घाटन की ओर संकेत या इशारा मात्र होगा।

मनुष्यत्व के रहस्योद्घाटन की तालिकायें :—

१— द्रव्य क्षेत्र काल भाव आदि अनेक दृष्टियों से मनुष्यत्व की अपरिपूर्णता या अधूरा पन बताना।

२— मनुष्य के सभी भाषाओं में प्रचलित-पर्यायवाचक शब्दों के अर्थों पर विचार करना और उसके यानी प्रत्येक नाम या शब्द के अनुसार 'मनुष्यत्व' की मर्यादा बांधना। और इसी प्रकरण में या सबसे अन्तिम प्रकरण में 'त्वया मीतं तत्वं, वृजनदा विवक्षोत्र-वशात्' के आधार पर ~~जैनत्व को~~ स्याद्वाद पद्धति द्वारा जैनत्व का दिग्दर्शन कराना, जिसमें सभी गुणस्थानों का आधुनिक ढंग से विवेचन आजाय।

३— 'मनुष्यत्व और शान्ति' शीर्षक प्रकरण में मौजूदा अवस्था का वर्णन करते हुए अनन्त शान्ति की ओर मनुष्य कैसे अग्रेसर होता है या हो सकता है? इस बात का अच्छी तरह वर्णन करना। जिसका आधार होगा 'श्री तत्वार्थ' के नवें अध्याय का उपान्त्य सूत्र।

४— क्या भौतिक विज्ञान की उन्नति के समान आत्मिक विज्ञान की भी उन्नति की जा-सकती है? इस प्रश्न का उत्तर देते हुए यह बतलाना होगा कि जिस प्रकार हम रेडियो आदि के द्वारा अपने विचार संसार को सुना सकते हैं, उसी प्रकार आत्मीय शक्ति के द्वारा भी अपने भावों का प्रदर्शन संसार के सामने किया जासकता है, जिसमें न किसी भौतिक यन्त्र की आवश्यकता है, न बिजली, तार आदि की ही। किन्तु, इसके लिए सबसे अधिक आवश्यकता है द्रव्य क्षेत्र काल भावादि के साथ-साथ आत्मीय शुद्धि की। इस आत्मीय शुद्धि के लिए यह आवश्यक नहीं है कि हर एक व्यक्ति शरीर धारण करके परमात्मा बना हुआ ही होना आवश्यक हो। और न इसके लिए कुछ भी पैसे

स्पर्श करने की ही आवश्यकता है। आवश्यकता है, सिर्फ — नियत एवं अल्प काल के लिए चित्त शुद्धि की, मन के ऐकाग्र्य की। फिर देखिए किस प्रकार आप संसार को दिखा सकते हैं कि 'मनुष्यत्व' क्या है?

५- मनुष्य के चंचल एवं अशान्त मन को किस प्रकार स्थिर एवं शान्त बनाया जा-सकता है? शीर्षक प्रकरण में उन सभी संभव उपायों का उल्लेख करना आवश्यक है, जिनके द्वारा मन चंचल का अपहरण होता है। इस प्रकरण में प्रत्येक कर्म प्रकृति के बंध उदय आदि का अतीव सुगम शैली में व्याख्यान करना आवश्यक होगा - जिससे कर्म सिद्धान्त के निरूपण के साथ २ लोगों को तद्विषयक यथार्थ ज्ञान प्राप्त हो सके और प्रत्येक मनुष्य अपने आत्मा के निरीक्षण के लिए उतावला हो जाय - सन्मार्ग पर चलने के लिए उद्यत हो जाय। यदि इतना किया जा सका, तो समझ लीजिए कि मेरा मनोरथ सफल हो गया —— |

६- मनुष्यशक्ति सम्बन्धी जितने भी प्रयोग मैंने अपने जीवन में किये हैं, और जिनका आशातीत फल, प्रभाव और अनुभव मुझे प्राप्त हुआ है, उन सबों-का उल्लेख करना। और लोगों को चैलेञ्ज के साथ इसके लिए प्रोत्साहित करना कि आप सब में वह शक्ति है, और इसका सबसे पुष्ट सबल एवं सत्य प्रमाण यही है कि आप लोग इतने लम्बे समय तक मेरी बातों को दिलचस्पी के साथ सुनते रहे हैं।

७- अन्त में 'मनुष्यत्व' के सम्पूर्ण रहस्य, अर्थात् वीतरागत्व, सर्वज्ञत्व और परमात्मत्व या ईश्वरत्व के रूप का दिग्दर्शन कराना।

—०—

५।३० तक लिखा हीरा

परिशिष्ट: —

'मनुष्यत्व' की जाँच कैसे की जाय? प्रश्न का उत्तर देते हुए यह बताना होगा कि 'मनुष्यत्व' के जितने भी रूप मौजूदा दुनिया में पाये जाते हैं - उन रूपों से, उन आदर्शों से ही 'मनुष्यत्व' की जाँच की जाय और समग्र मनुष्यत्व के साथ तुलना की जाय। फिर हम उसे कौन सा स्थान दे सकते हैं। इसी प्रकरण में यह भी बताना आवश्यक है कि दया, दान, उपकार, वीरता आदि का सच्चा अर्थ क्या है? हमारे दो आँखें - या प्राणिमात्र के दो आँखें होने का क्या रहस्य है? क्योंकि दोनों आँखों से वस्तु की जाँच करना ही सच्चा मनुष्यत्व है। एक आँख से - एकान्त (नय) से देख - जाँच कर तो जो गदा पदार्थ जैसा ही अपूर्ण रहेगा।

५।४५ पर हीरा
कलकत्ता शुक्रवार ता. २८-४-
१३।३।३८